संवर–निर्जरा

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भगवान महावीर ने दो प्रकार के धर्म बतलाये हैं– संवर और निर्जरा। जिससे पापकारी प्रवृत्तियों के आने का द्वार बन्द होता है वह संवर है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग अशुभ प्रवृत्तियां हैं। आत्मा से संयुक्त होकर कषाय बढ़ता है। आश्रव आने का द्वार है। संवर आश्रव का विरोधी है। जब घर का मुख्य द्वार बन्द हो जाता है तो कोई अवांछनीय व्यक्ति घर में प्रवेश नहीं कर पाता। कर्मों के आने के द्वार बन्द हो जाने पर कर्म आत्मा में प्रवेश नहीं कर पाते। यह संवर धर्म है।

मानव का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। आत्मा का गुण शरीर में व्यक्त होता है। जैन दर्शन नौ तत्त्वों को स्वीकार करता है उसमें संवर औनर निर्जरा भी ऐसे दो तत्त्व हैं जो कर्मों को रोकते हैं और भीतर प्रविष्ट कर्मों को बाहर निकालते हैं। कर्मों के प्रवेश द्वार को बन्द कर देना संवर है और भीतर प्रविष्ट कर्मों को निकाल देना निर्जरा है। सवंर और निर्जरा का सम्बन्ध कर्मों से हैं। कर्म परमाणु आत्मा से चिपक कर कर्म बन जाते हैं। उस पर अपना प्रभाव डालने के बाद वे अकर्म बन जाते हैं। अकर्म बनते ही वे आत्मा से विलग हो जाते हैं। इस बिलगाव की दशा का नाम है कर्म निर्जरा।

निर्जरा कर्मों की होती है। यह औपचारिक सत्य है। वस्तु सत्य यह है कि कर्मों की वेदना अर्थात अनुभूति होती है, निर्जरा नहीं होती। निर्जरा अकर्म की होती है। वेदना के बाद कर्म परमाणु का कर्मत्व नष्ट हो जाता है फिर निर्जरा होती है। कोई फल डाली पर पककर टूटता है और किसी फल को प्रयत्न से पकाया जाता है। पकते दोनों हैं, किन्तु पकने की प्रक्रिया दोनों की भिन्न है। जो सहज गति से पकता है उसका पाक काल लम्बा होता है और जो प्रयत्न से पकता है उसका पाक काल छोटा होता है। कर्म का परिपाक भी ठीक इसी प्रकार होता है।

निश्चित काल मर्यादा से जो कर्म परिपाक होता है उसकी निर्जरा को बिपाकी निर्जरा कहा जाता है। यह अहेतुक निर्जरा है। इसके लिए कोई नया प्रयत्न नहीं करना पड़ता। इसलिए इसका हेतु न धर्म होता है और न अधर्म। निश्चित काल मर्यादा से पहले शुभ योग के व्यापार से कर्म का परिपाक होकर जो निर्जरा होती है उसे अबिपाकी निर्जरा कहा जाता है। यह सहेतुक निर्जरा है। इसका हेतु शुभ प्रयत्न है। यह धर्म है। मोक्ष इसका उत्कृष्ट रूप है। कर्म की पूर्ण निर्जरा ही मोक्ष है। कर्म का अपूर्ण विलय निर्जरा है। दोनों में मात्रा भेद है स्वरूप भेद नहीं। निर्जरा का अर्थ है आत्मा का विकास या स्वभावोदय। अभेदोपचार की दृष्टि से स्वभावोदय के साधनों को भी निर्जरा कहा जाता है। सकाम और अकाम निर्जरा इसी दृष्टि से चिंन्तनीय है। वस्तुतः सकाम और अकाम तप होता है निर्जरा नहीं। निर्जरा आत्मशुद्धि है।

कर्म परमाणु के विकर्षण के साथ—साथ दूसरे कर्म परमाणुओं का आकर्षण होता रहता है। कर्म सम्बन्ध के प्रधान साधन दो हैं— कषाय और योग। कषाय प्रबल होता है तब कर्म परमाणु आत्मा के साथ अधिक काल तक रहते हैं। कषाय के मन्द होते ही उनकी फल शक्ति मंद हो जाती है। कषाय मंद होते ही निर्जरा अधिक होती है। पुण्य का बंध शिथिल होता जाता है। प्रायः यह कहा जाता है कि आत्मा अजर, अमर और अनादि है। इसलिए कर्म भी अनादि हैं जो अनादि होता है उसका अंत नहीं होता। ऐसी दशा में अनादिकालीन कर्म सम्बन्ध का अंत कैसे हो सकता है? अनादि का अंत नहीं होता यह नियम है।

व्यक्ति विशेष पर यह लागू भी नहीं होता। प्राग्भाव अनादि है फिर भी उसका अंत होता है। स्वर्ण और मिट्टी का, घी और दूध का सम्बन्ध अनादि है फिर भी वो पृथक् होते हैं। ऐसे ही आत्मा और कर्म के अनादि सम्बन्ध का अंत होता है। आत्मा से जितने कर्म पुद्गल चिपके होते हैं वे सब अवधि सहित होते हैं। कोई भी एक कर्म अनादिकाल से आत्मा के साथ घुलमिलकर नहीं रहता। आत्मा मोक्षोचित सामग्री प्राप्त कर अनाश्रव बन जाती है तब नये कर्मों का प्रवाह रूक जाता है। संचित कर्म तपस्या द्वारा टूट जाते हैं और आत्मा मुक्त बन जाता है।

समस्त कर्मों का अन्तिम उद्देश्य आत्मा का उत्थान और उद्धार ही माना गया है। आत्मा समस्त कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय तथा उनके विषय, मन, अहंकार, बुद्धि आदि से भी परे है। यह समस्त

प्रकृति एक क्षेत्र है और आत्मा क्षेत्रज्ञ है। आत्मा के बन्धन मुक्त होने के लिये शास्त्रों में संन्यास और योग के मार्गों का निरूपण किया गया है। पर जो गृहस्थ गीता में प्रदर्शित दान, अतिथि सत्कार, नित्य, नैमित्तिक आदि कर्त्तव्यों को हार्दिक भाव से पूरा करता है और सत्य आचरण पर दृढ़ रहता है, वह भी निस्सन्देह मुक्ति का अधिकारी होता है। निष्काम कर्म का तात्पर्य है ऐसा कर्म जिसे बिना किसी लालसा, बिना किसी कामना और फल की इच्छा किये बिना किया जाये। ऐसा कर्म निष्काम कर्म कहलाता है। कामना पूर्वक किया गया कर्म बंधन का कारण होता है। फल की इच्छा का त्याग कर जो कर्म किया जाता है वह बंधन का कारण नहीं होता, क्योंकि यह कर्म आसक्ति रहित है। संवर से निर्जरा होती है। मानव जीवन पारसमणी है। निष्काम कर्म निर्जरा का साधन है। आत्मा से कर्म निकल जाने के बाद आत्मा शुद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाता है।